IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 2, Issue 1, October 2022
Impact Factor: 6.252

आदिवासी समाज की प्रगति और राष्ट्रीय धारा में योगदान

Dr. K. S. Netam[2] and Vinod Kumar Verma[2]
Professor and Head, Department of Geography[1]
Research Scholar, Department of Geography[1]
Sanjay Gandhi Smriti Government (Autonomous) PG College, Sidhi, MP, India

प्रस्तावना:

समाज के निर्बल वर्ग विशेष रुप से अनुसूचित जनजातियाँ सदियों से ही देश की सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था में सबसे निचले स्तर पर जीवन–यापन के लिये मजबूर रही हैं। इनकी आर्थिक प्रगति के चरण विभिन्न रहे हैं। अतएव उनकी स्थिति के अनुसार कार्यक्रम तय करना अनिवार्य समझा गया और इसे राष्ट्रीय कार्यक्रम की मान्यता दी गई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश के कर्णधारों ने भारतीय समाज के संबंध में एक सुन्दर स्वप्न देखा। वह स्वप्न था एक ऐसे समाज का जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को जीवन की आवश्यक सुविधाएँ प्राप्त हो और सामाजिक, आर्थिक तथा अन्य प्रकार के अन्यायों से मुक्त होकर वह अपने जीवन को सफल तथा सुन्दर बनाने के काम को कर सके। उनका विचार था कि यदि हमें अपने देश को एक सुन्दर समाज तथा एक सबल राष्ट्र का निर्माण करना है तो सबसे अधिक ध्यान समान के उन अंगो पर देना होगा जो अभी भी पिछड़े हुये हैं। जिस प्रकार एक जंजीर की ताकत उसकी सबसे कमजोर कड़ी की ताकत पर ही निर्भर करती है। उसी प्रकार किसी समाज तथा राष्ट्र की सफलता उसके सबसे पिछड़े हुये भागों पर निर्भर करती है। समाज तथा राष्ट्र के अन्दर किसी भाग का पिछड़ा होना सारे समाज तथा राष्ट्र के लिये खतरे का कारण हो सकता है। उत्थान और विकास केवल एक पहलू है। उससे भी महत्वपूर्ण पहलू है, वनाच्छादित और दुर्गम क्षेत्रों में रहने वाले इन देशवासियों को वृहद समाज और इतिहास की मुख्य धारा में जोड़ना। यहाँ एक ओर जनजातियों का उत्थान और विकास योजना निर्माताओं और विकास प्रशासकों का कार्यक्षेत्र है वहीं दूसरे छोर पर बसे समाजों को वृहत् समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का उत्तरदायित्व सम्पूर्ण वृहत् समाज का है। अनुसूचित जनजातियाँ अब भी सामाजिक अन्याय सह रही हैं, जिसके परिणाम स्वरुप की सामाजिक तथा आर्थिक असमानताएँ हैं। इसी कारण ये अब भी सामाजिक विवशताओं की बेड़ियों से जकड़े हुये हैं औश्र आर्थिक दृष्टि से दूसरों पर निर्भर है। अतः यह आवश्यक है कि सभी संबंधित व्यक्ति सबसे पहले यह अनुभव करे कि इस समुदाय की समस्या समाज के किसी वर्ग तक ही सामित नहीं है वरन् राष्ट्र की एक गंभीर समस्या है जिसका संबंध मानवता की प्रतिष्ठा और विकास से है। इसलिये इस समस्या को पर्याप्त गंभीरता और तीव्रता से हल करने की आवश्यकता है ताकि कम से कम समय में समाज के इस कमजोर वर्ग को देया के सामान्य स्तर पर लाया जा सके। इस संदर्भ में गोपाल कृष्ण गोखले का कथन इस प्रकार है– ''सभी निष्पक्ष व्यक्ति यह स्वीकार

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 2, Issue 1, October 2022
Impact Factor: 6.252

करेंगे कि यह घोर विडम्बना है कि मानव जाति के एक वर्ग के लोगों की जिसका शरीर हम जैसा ही है, जिसके न विचार करने वाले मस्तिष्क और अनुभव करने वाले हृदय है, दासता और भय से भाग्य ऐसा हेय जीवन बिताने के लिये विवश कर दिया जाय। जिन्हें मानसिक और मौलिक दृष्टि से गिरा हुआ माना जाय और उनके रास्ते में ऐसे स्थायी अवरोध पैदा किये जायें कि उनको तोड़कर आगे बढ़ना और अपना भाग्य सुधारना उनके लिये असंभव हो जाये। इससे हमारे न्याय बोध को गहरा आघात पहुचता है। मैं मानता हूँ कि यदि कोई व्यक्ति मानसिक रुप से स्वयं को उनकी स्थिति में रखे तो वह बहुत की आसानी से समझ सकता है कि यह अन्याय कितना कष्टदायक है।''

जनजातियों के उत्थान के लिये पं. जवाहर लाल नेहरु द्वारा दिये गये पांच मूल सिद्धान्त ''पंचशील'' के नाम से अधिक प्रसिद्ध रहा है। 1959 में एल्विन रचित पुस्तक 'ए फिलास्फी फार एन.ई.एफ.ए.' (नेफा दर्शन) की भूमिका में श्री नेहरु ने जो टिप्पणी लिखी थी वह आज भी उपयोगी है। नेहरु के अनुसार– ''हम जनजातीय क्षेत्रों में मात्र अभिरुचि नहीं रहने के कारा उस क्षेत्र के तथ्यों को यूं ही व्यर्थ रहने के लिये छोड़ नहीं सकते। हमें उन क्षेत्रों को अति प्रशासन से दूर जाना चाहिये तथा विशेष रुप से जनजातीय क्षेत्रों में बाहरी व्यक्तियों को अधिक नहीं भेजना चाहिये। हमें इन दो अतियों के बीच कार्य करना है। वहाँ विविध प्रकास के विसा होने चाहिये जैसे संचार, औषधि की सुविधा, शिक्षा, कृषि, परिवहन, प्रौद्योगिकी। फिर भी निम्नांकित पाँच मौलिक सिद्धांतों के वृहत् ढ़ांचे के आधार पर ही विकास के उन तरीकों को पालन करना चाहिये। ये पांच मूल सिद्धांत इस प्रकार हैं–

1. जनजाति के लोगों का विकास उनकी अपनी प्रतिभा के अनुरुप होना चाहिये तथा हमें उन पर कुछ भी लादने की प्रवृत्ति से बचना चाहिये, हमें प्रत्येक दिशा में उनकी अपनी पारम्परिक कलाओं और उनकी संस्कृति को बढ़ावा देना चाहिये।
2. भूमि तथा वनों से संबंधित जनजातीय अधिकारों का हम सबके द्वारा सम्मान किया जाना चाहिये।
3. प्रशासन तथा विकास के कामों के लिये उन्हीं लोगों को प्रशिक्षण देना चाहिये तथा उन्हीं में से एक टीम का निर्माण करना चाहिये बाहर से कुछ तकनीकी व्यक्तियों को विशेषतः प्रारंभ में निःसंन्देश आवश्यकता पड़ेगी परन्तु हमें जनजातीय क्षेत्रों में बहुत सारे लोगों के प्रवेश पर अंकुश रखना चाहिये।
4. हमें इन क्षेत्रों का बहुत अधिक प्रशासन नहीं करना चाहिये हमें उनकी अपनी सामाजिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं की प्रतिद्वन्दी संस्थायें नहीं खड़ी करनी चाहिये बल्कि उन्हीं के माध्यम से कार्य करना चाहिये।
5. हमें परिणामों का आकलन आंकड़ों अथवा व्यय की गई धनराशि के आधार पर नहीं अपितु निर्मित हुये मानव चरित्र की गुणवत्ता के आधार पर करना चाहिये।

जनजातियों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में गति लाने के लिये बहुत सारी कल्याणकारी योजनाओं को प्रशासन तथा समाजसेवी संस्थाओं की ओर से लागू किया गया। स्वाधीनता से पूर्व ब्रिटिश

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 2, Issue 1, October 2022
Impact Factor: 6.252

सरकार की यह नीति थी कि जनजातियों को पृथक रखा जाय। इस तरह अंग्रेजों ने ''अलगाव'' की नीति अपनाई और आदिवासियों को भारतीय जीवन की मुख्यधारा से दूर रखने का प्रयत्न किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ही उन्हें मुख्यधारा में ले आने की मंशा से स्व–अंगीकरण की नीति का अनुसरण किया गया। सरकार ने जनजातीय विकास की ओर प्राथमिकता के आधार पर कार्य करने की नीति बनाई। 26 जनवरी सन् 1950 से लागू भारत के गणतंत्रीय संविधान ने पिछड़े लोगों के प्रति अपनी निष्ठा और तत्परता दिखाते हुये उन्हें संरक्षण प्रदान किया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. योजना, पाक्षिक पत्रिका 1996 : 2000 सूचना प्रकाशन विभाग, भारत सरकार दिल्ली
2. भारत 1995, भारत 1996 : सूचना एवं प्रकाशन विभाग नई दिल्ली भारत सरकार
3. पन्निकार के. एम. 1956 : हिन्दी समाज निर्णय के द्वारा पर, एशिया पब्लिसिंग, हाऊस बम्बई
4. पाण्डेय, नर्मदा प्रसाद 1962 : रीवा राज्य का भूगोल, म.प्र. पाठ्य पुस्तक निगम भोपाल
5. प्रसाद, नर्मदेश्वर 1965 : जाति व्यवस्था, राजकमल दिल्ली
6. श्री हट्टन, जे. एच.1933 : भारत में जाति प्रथा, अनुवादक मंगलनाथ सिंह, दिल्ली
7. श्री फॉक्स, रॉबिन 1973 : नातेदारी एवं विवाह, अनुवादकः डॉ. आर. के. बाजपेयी म. प्र. हिन्दी
8. राय, सिर्द्धश्वरी नारायण : पौराणिक धर्म एवं समाज, पंचनद पब्लिकेशन्स इलाहाबाद
9. उप्रेता, हरिशचन्द्र 1982 : भारतीय जनजातियाँ, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
10. डॉ. शर्मा, ब्रम्हदेव 1986 : आदिवासी विकास–एक सैद्धांतिक, विवेचन म. प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल
11. डॉ. बघेल, डी. एस. 1986 : सामाजिक अनुसंधान, पुष्पराज प्रकाश रीवा